WWJMRD 2015; 1(4): 70-72
www.wwjmrd.com
International Journal
Peer Reviewed Journal
Refereed Journal
Indexed Journal
Impact Factor MJIF: 4.25
E-ISSN: 2454-6615

राधा सारस्वत
शोधार्थी व्याख्यता, लोकप्रशासन
एस.एम.एम. कन्या महाविद्यालय,
भीलवाड़ा (राज.), भारत

Correspondence:
राधा सारस्वत
शोधार्थी व्याख्यता, लोकप्रशासन
एस.एम.एम. कन्या महाविद्यालय,
भीलवाड़ा (राज.), भारत

उदारीकरण और भू–मण्डलीकरण का नौकरशाही पर प्रभाव

राधा सारस्वत

शोध सांराश–
उदारीकरण और भू–मण्डलीकरण दोनों ने ही भारत में नौकरशाही को प्रभावित किया है। भारत में नौकरशाही का प्रारम्भ ब्रिटिश काल की देन है। उदारीकरण का सामान्य तात्पर्य है–बन्धनों से मुक्ति तथा भू–मण्डलीकरण की धारणा सम्पूर्ण विश्व ग्राम की धारणा से प्रेरित है। किसी भी लोकतान्त्रिक शासन प्रणाली के संचालन में नौकरशाही का विशेष योगदान होता है। सन् 1991 के बाद भारत में उदारीकरण का विकास तेजी से हुआ। जिसका प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष प्रभाव नौकरशाही पर भी पड़ा। उदारीकरण के दौर में सरकार के आकार में कटौती, नौकरशाही के कार्यभार के हल्का करने, परिणाम प्राप्ति, उत्पादकता और जवाबदेयता जैसे शब्द लोकप्रशासन के क्षेत्र में गुंजायमान होने लगे।

Keywords: वसुधैव कुटुम्बकम, उदारीकरण, वैश्वीकरण, भू–मण्डलीकरण, नौकरशाही, प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष।

शोध विस्तार–
आधुनिक विश्व में 'वसुधैव कुटुम्बकम्' के विचार को 'मानव अधिकारों की सुरक्षा' एवं 'राष्ट्रों के मध्य सहयोगात्मक, संबंधो की स्थापना' के संदर्भ में विशेष महत्व दिया जा रहा है। इसी विचार के आधार पर बीसवीं शताब्दी के आंकड़े दशक में 'वैश्वीकरण' एवं 'उदारीकरण' की धारणा प्रमुखता के साथ प्रचलन में आई।[1]
'वैश्वीकरण' की धारणा के अन्तर्गत सम्पूर्ण विश्व को एक 'भू–मण्डलीय गांव' के रूप में देखा जाता है। वैश्वीकरण की अवधारणा निम्नलिखित तत्वों को निर्देशित करती है–

- विश्व के विभिन्न दंगों के मध्य बिना किसी व्यवधान के वस्तुओं के आदान–प्रदान को सम्भव बनाने हेतु व्यापारिक अवरोधों को कम करना।
- आधुनिक प्रौद्योगिकी का सम्पूर्ण विश्व में निर्बाध प्रभाव व प्रवाह संभव बनाने हेतु अनुकूल वातावरण तैयार करना।
- ऐसी परिस्थितियॉ निर्मित करना जिनमें एक राष्ट्र से दूसरे राष्ट्र के मध्य पूंजी का स्वतंत्र प्रवाह संभव हो सके।
- विश्व के विभिन्न देशों के मध्य भ्रम का निर्बाध प्रवाह सम्भव बनाना इस प्रकार स्पष्टत है कि 'वैश्वीकरण' (भू–मण्डलीकरण) से अभिप्राय विश्व के समस्त संसाधनों, ज्ञान, जनशक्ति, सुविधाओं, बाजारों एवं सेवाओं आदि को विश्व के सभी लोगों को निर्बाध रूप से उपलब्ध कराना है। वैश्वीकरण के द्वारा ही एक देश की अर्थव्यवस्था सरलतापूर्वक विश्व की अर्थव्यवस्था से जुड़ जाती है।

यह न केवल अर्थव्यवस्था एवं संचार से संबंधित धारणा है वरन् सामाजिक व राजनीतिक क्षेत्रों में भी विश्व के समीकरण का एक सार्थक प्रयास है। यह विश्व के समस्त लोगों के मध्य बंधुत्व की स्थापना करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।[2]
वस्तुतः यह विश्व के सभी भागों में रहने वाले लोगों के मध्य आर्थिक, व्यापारिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक संबंधों को एक व्यापक एवं गतिमान रूप प्रदान करने में संबंधित प्रक्रिया है।
उदारीकरण का सीधा संबंध राज्य के अन्दर एवं बाहर मुक्त व्यापार की परिस्थितियों का क्रमिक विकास करने से है। अन्य शब्दों में इसका अर्थ व्यापार को शनैः शनैः कानूनों व नियमों के बंधनों से मुक्त कर 'स्वतंत्र बाजार व्यवस्था' की स्थापना करना है। उदारीकरण की प्रक्रिया के अन्तर्गत व्यापार उद्योग एवं निवेश के स्वतंत्र प्रवाह में बाधा उत्पन्न करने वाले प्रतिबंधों को समाप्त किया जाता है। साथ ही विभिन्न करो में रियायत दी जाती है तथा सीमा शुल्कों में कटौती की जाती है। विदेशी

निवेशकों को उनकी सम्पदा एवं पेटेन्ट की सुरक्षा के अधिकार की गारण्टी दी जाती है। उदारीकरण की धारणा 'सरकारीकरण' के स्थान पर 'निजीकरण' की समर्थक है।[3]

'निजीकरण' से तात्पर्य है–उद्योग एवं व्यापार को सरकारी क्षेत्र से निजी नियंत्रण में लाना। आर्थिक क्षेत्र में सरकारी हस्तक्षेप को क्रमशः कम करते हुए प्रतिस्पर्धा पर आधारित निजी क्षेत्र को प्रोत्साहित करना उदारीकरण की अवधारणा निजीकरण के माध्यम से सरकारी प्रतिष्ठानों में निजी निवेशकों की सहभागिता बढ़ाने की भी पक्षधर है।

लोक प्रशासन पर प्रभाव– 1980 के पश्चात् से 'वैश्वीकरण एवं उदारीकरण' के परिणामात्मक विश्व के सभी देशों में महान परिवर्तन परिलक्षित हुए है। विभिन्न देशों में इन परिवर्तनों की गति भिन्न–भिन्न रही है। इन अवधारणाओं का प्रभाव सर्वप्रथम पश्चिम के विकसित देशों में देखने को मिला। तदुपरान्त साम्यवादी अर्थव्यवस्थाओं के विफल रहने पर सोवियत संघ व चीन जैसे साम्यवादी देश भी आर्थिक उदारीकरण की नीति को अपनाने के लिए विवश हुए। भारत में आर्थिक सुधारों की प्रक्रिया राजीव गांधी के समय आरम्भ हुई। 1991 में नरसिंह राव के शासनकाल में सार्वजनिक क्षेत्र को सीमित करते हुए निजीकरण को प्रोत्साहित किया गया। इसके बाद अटल बिहारी वाजपेई सरकार ने अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के मार्ग की बाधाओं को दूर किया। इस दौरान बड़े पैमाने पर भारत में बाह्य देशों से पूंजी निवेश हुआ।[4] 'वैश्वीकरण एवं उदारीकरण' की प्रक्रियाओं के परिणामस्वरूप लोक प्रशासन और नोकरशाही की भूमिका में भी बदलाव आने लगे।

राज्य व सरकार की भूमिका का कम होना–'लोक कल्याणकारी राज्य' की अवधारणा के अस्तित्व में आने के साथ ही राज्य के दायित्वों में भी वृद्धि हो गई थी। लोक कल्याणकारी राज्य में 'समाजवादी लक्ष्य' एवं 'नियोजित आर्थिक विकास' को प्राथमिकता देने के कारण भी यह वृद्धि होना स्वाभाविक था। नियोजित आर्थिक विकास के अन्तर्गत आर्थिक गतिविधियों के नियंत्रण एवं संचालन का सम्पूर्ण दायित्व राज्य व सरकार के हाथों में आ गया किन्तु उदारीकरण के परिणाम स्वरूप निजीकरण को प्रोत्साहन दिया गया। जिसके कारण राज्य व सरकार के अधिकांश कार्य निजी क्षेत्रों में आ गए। परिणामस्वरूप राज्य व सरकार की भूमिका कम होती चली गई।[5]

बाजारीकरण एवं निजीकरण पर बल– स्वातन्त्रोत्तर भारत में अर्थव्यवस्था पर नियंत्रण हेतु कोटा परमिट व लाईसेंस प्रणाली को आरम्भ किया गया, किन्तु 'उदारीकरण' की अवधारणा के अस्तित्व में आने के बाद कोटा, परमिट व लाईसेंस प्रणाली को कम करने पर बल दिया गया। साथ ही बाजारीकरण व निजीकरण की प्रक्रियाओं को प्रोत्साहित किया गया।

लोक प्रशासन की सकारात्मक भूमिका में वृद्धि– उदारीकरण की प्रक्रिया के प्रारम्भ होने से पूर्व अर्थव्यवस्था राज्य के नियंत्रण में थी तथा नौकरशाही का स्वरूप नकारात्मक तथा अड़ग्नें लगाने की नीति से परिपूर्ण था किन्तु उदारीकरण के युग में नौकरशाही की भूमिका में परिवर्तन अपेक्षित था। वर्तमान वैश्वीकरण एवं उदारीकरण के युग में नौकरशाही से सहयोगात्मक रचनात्मक एवं सकारात्मक भूमिका के निर्वाह की अपेक्षा की जाती है। पश्चिम के विकसित देशों में लोक प्रशासन के क्षेत्र में संरचनात्मक एवं कार्यात्मक दृष्टि से सकारात्मक परिवर्तन किया जा चुके है किन्तु भारत जैसे विकासशील देशों में यह प्रक्रिया अभी जारी है।

सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों का विनिवेशन–वैश्वीकरण एवं उदारीकरण के इस युग में सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों में निरन्तर बढ़ती समस्याओं से जूझने के लिए इन क्षेत्रों में निजी क्षेत्रों की सहभागिता को प्रोत्साहित किया जा रहा है। सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों में निजी विनिवेशन के माध्यम से यह अपेक्षा की जाती है कि सार्वजनिक व किसी निजी प्रबंधक मिलकर उपक्रम की उतपादकता एवं गुणवत्ता में वृद्धि का प्रयास करेंगे। साथ ही विनिवेशीकरण की इस नीति के द्वारा भविष्य में सार्वजनिक उपक्रमों के निजीकरण का मार्ग प्रशस्त किया जा रहा है।[6]

वैश्वीकरण एवं उदारीकरण से उत्पन्न चुनौतियों का सामना करने के लिए प्रशासनिक सुधारों की ओर विशेष ध्यान दिया जा रहा है तथा लोक प्रशासन को अधिकाधिक 'लक्ष्योन्मुखी' एवं 'परिणामोन्मुखी' बनाने का प्रयास किया जा रहा है। लोक प्रशासन में कतिपय नवीन तत्वों तथा नव–लोक प्रबंधन, ई–गवर्नेंस, गुणवत्ता, जवाबदेही, पारदर्शिता आदि को सम्मिलित किया जा रहा है। प्रशासन के अधिकांश कार्य संविदा के आधार पर निजी क्षेत्रों को सौंपे जा रहे है। भारत में भी प्रशासनिक सुधार के ये प्रयास जारी है।

लोक चयन सिद्धान्त का अर्थ है जनता स्वयं ही सार्वजनिकहित प्रदान करने के साधन का चुनाव करे। सामान्यतः सत्य को ही सार्वजनिक हित का सम्पोषक माना जाता रहा है, किन्तु वैश्वीकरण एवं उदारीकरण के बाद खुली अर्थव्यवस्था एवं निर्बाध व्यापार को महत्व दिया जाने लगा जिसके परिणामस्वरूप 'बाजारी शक्तियों' को भी 'सार्वजनिक हित' का सम्पोषक माना जाने लगा है।

परिवर्तित परिस्थितियों की एक अन्य महत्वपूर्ण देन है–स्थानीय स्तर पर भी जमता की प्रशासन में भागीदारी को अधिकाधिक प्रोत्साहित करना। सरकार का दायित्व माना गया कि वह दूसरों को शासन चलाने में अधिकाधिक सहयोग दे। लोकहित को स्थानीय रूप से परिभाषित किया गया।[7]

वैश्वीकरण एवं उदारीकरण के परिणाम स्वरूप नौकरशाही को अधिक लचीला बनाने का प्रयास किया जा रहा है। इन नवीन अवधारणाओं ने नौकरशाही के परम्परागत स्वरूप को विकृतिकयों से युक्त एवं अधिकाधिक व्ययशील बताया है तथा सुझाव प्रस्तुत किया कि लोक प्रशासन की सेवाओं की गुणवत्ता में वृद्धि करने के लिए उनमें निजी क्षेत्र की सेवाओं एवं व्यवस्थाओं को विकसित किया जाना चाहिए। संविदा के आधार पर सार्वजनिक एवं निजी क्षेत्रों में एक प्रकार्यात्मक संयोजन विकसित करने पर बल दिया गया है।[8]

लोक प्रशासन की नवीन धारणाओं के अन्तर्गत प्रशासन में जन भागीदारी 'निर्णयन एवं क्रियान्वयन रूप में' होना परम आवश्यक माना जा रहा है। स्थानीय स्तर तक जन भागीदारी के आधर पर ही सच्चे अथों में लोकहित की प्राप्ति संभव है। इससे जन भावना एवं जन आकांक्षाओं के अनुरूप लोकतांत्रिक व्यवस्था की स्थापना हो सकेगी।[9]

पारम्परिक लोक प्रशासन में पुरूषों का वर्चस्व था, किन्तु लोक प्रशासन की नई धारणाओं के अन्तर्गत प्रशासन में स्त्री व पुरूषों की समान भागीदारी होती है। इसके परिणाम स्वरूप प्रशासन में भावनात्मक एवं मानवतावादी तत्वों का अच्छा संयाजन देखने को मिलता है। जनता को शासन की समस्त जानकारियों से अवगत् कराने के लिए प्रभावी संचार व्यवस्था पर बल दिया जा रहा है। उदारीकरण के दौर में सरकार के आकार में कटौती, नौकरशाही के कार्यभार के हल्का करने, परिणाम प्राप्ति, उत्पादकता और जवाबदेयता जैसे शब्द लोकप्रशासन के क्षेत्र में गुंजायमान होने लगे। ओसबोर्न और गैबलेर ने अपनी प्रसिद्ध कृति में 'उद्यमी सरकार' की आवश्यकता प्रतिपादित की जिसके निम्न लक्षण बताये है– उत्प्रेरक सरकार, समुदायों की सरकार, सेवा करने वाली सरकार, परिणामोन्मुखी सरकार, ग्राहकोन्मुखी सरकार, परिश्रमी सरकार, प्रतिस्पर्द्धी सरकार, विकेन्द्रित सरकार, दूरदर्शी सरकार, बाजारोन्मुखी सरकार।[10]

उनके द्वारा बताई गई नौकरशाही की निम्न विशेषताएँ वर्तमान भारतीय नौकरशाही में देखने को मिलती है, परन्तु भारतीय नौकरशाही आज भी भ्रष्टाचार और लालफीताशाही से पीड़ित है।

निष्कर्ष–

उदारीकरण के दौर में नौकरशाही के विकल्प की तलाश जोर–शोर से प्रारम्भ हुई। 'नवीन लोक प्रबंध' का एक नया प्रतिमान हाथ लगा जिसका जोर बाजार और निजीकरण पर अधिक है। लोक विकल्प (चयन) सिद्धान्त ने नौकरशाही को बाजार प्रतिस्पर्द्धा में धकेल कर सेवा मानकों में निरन्तर सुधार का मार्ग सुझाया। निस्कानेल का नारा था, ''एक उत्तम सरकार लघुत्तर सरकार होगी'' ''उदारीकरण और भू–मण्डलीकरण की स्वीकृति के बाद राज्य अनेक क्षेत्रों में बाजार तथा नागरिक समाज के समक्ष समर्पण करता हुआ दिखाई दिया।'' जहां उदारीकरण के प्रारम्भिक दौर में 'नौकरशाही के आकार में कमी' का नारा बुलंद किया गया था वहीं आज 'राज्य के पुनः आगमन' की पुरजोर वकालत की जा रही है।

संदर्भ सूचीः–

1. आर.के. दुबे : आधुनिक लोक प्रशासन, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल प्रकाशन, आगरा, 1992, पृ. 53
2. टी.एन. चतुर्वेदी : तुलनात्मक लोक प्रशासन, रिसर्च प्रकाशन, सामाजिक विज्ञान, दिल्ली, पृ. 57
3. अवस्थी एवं अवस्थी : भारतीय प्रशासन, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल प्रकाशन, आगरा, 2001, पृ. 60
4. पी.डी. शर्मा : लोक प्रशासनः सिद्धान्त एवं व्यवहार, पृ. 63
5. के.पी. सिंह : भारतीय सरकार और राजनीति, पुष्पराज प्रकाशन, 1976–77, पृ. 69
6. दैनिक भास्कर, जयपुर, 6 मार्च 2006
7. जी.ई. ग्लैडन : डायनेमिक्स ऑफ पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन, राइनहर्ट, न्यूयार्क, 1971, पृ. 71
8. एस.आर. माहेश्वरी : दि एडमिनिस्ट्रेटिव रिफार्म कमीशन, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल प्रकाशन, आगरा, 1990, पृ. 76
9. अमर उजाला : नौकरशाही का बदलता स्वरूप, 15 जून, 2004
10. चन्द्रा हीरावत : तुलनात्मक प्रशासनिक व्यवस्थाएँ, कॉलेज बुक डिपो, जयपुर, 1999, पृ. 78